७३० ववाणिया, मार्गशीर्ष सुदी १२, १९५३

सर्वज्ञाय नमः

'आत्मसिद्धि' की टीकाके पन्ने मिले हैं।

यदि सफलताका मार्ग समझमें आ जाये तो इस मनुष्यदेहका एक समय भी सर्वोत्कृष्ट चिंतामणि है, इसमें संशय नहीं हैं।

---

७३४ ववाणिया, मार्गशीर्ष वदी ११, बुध, १९५३

श्री सुभाग्य आदिके प्रति लिखे गये पत्रोंमेंसे जो परमार्थ संबंधी पत्र हों उनकी अभी हो सके तो एक अलग प्रति लिखियेगा।

सौराष्ट्रमें अभी कब तक स्थिति होगी, यह लिखना अशक्य है।

यहाँ अभी थोड़े दिन स्थिति होगी ऐसा संभव है।

७४० मोरबी, माघ सुदी ९, बुध, १९५३

'आत्मसिद्धि'का विचार करते हुए आत्मा संबंधी कुछ भी अनुप्रेक्षा रहती है या नहीं? यह लिख सकें तो लिखियेगा।

कोई पुरुष स्वयं विशेष सदाचारमें तथा संयममें प्रवृत्ति करता है, उसके समागममें आनेके इच्छुक जीवोंको, उस पद्धतिके अवलोकनसे जैसा सदाचार तथा संयमका लाभ होता है, वैसा लाभ प्रायः विस्तृत उपदेशसे भी नहीं होता, यह ध्यानमें रखने योग्य है।

७४२ मोरबी, माघ वदी ४, रवि, १९५३

संस्कृतका परिचय न हो तो कीजियेगा।

जिस तरह अन्य मुमुक्षुजीवोंके चित्तमें और अंगमें निर्मल भावकी वृद्धि हो उस तरह प्रवृत्ति कर्तव्य है। नियमित श्रवण कराया जाये तथा आरंभ-परिग्रहके स्वरूपको सम्यक् प्रकारसे देखते हुए, वे निवृत्ति और निर्मलताको कितने प्रतिबंधक है यह बात चित्तमें दृढ़ हो ऐसी परस्परमें ज्ञानकथा हो यह कर्तव्य है।

७४९ ववाणिया, फागुन वदी ११, १९५३

त्रिभोवनकी लिखी हुई चिट्ठी तथा सुणाव और पेटलादके पत्र मिले हैं।

'कर्मग्रंथ' का विचार करनेसे कषाय आदिका बहुतसा स्वरूप यथार्थ समझमें नहीं आता, वह विशेष अनुप्रेक्षासे, त्यागवृत्तिके बलसे और समागमसे समझमें आने योग्य है।

'ज्ञानका फल विरति है'। वीतरागका यह वचन सभी मुमुक्षुओंको नित्य स्मरणमें रखने योग्य है। जिसे पढ़नेसे, समझनेसे और विचारनेसे आत्मा विभावसे, विभावके कार्योंसे और विभावके परिणामसे उदास न हुआ, विभावका त्यागी न हुआ, विभावके कार्योंका और विभावके फलका त्यागी न हुआ; वह पढ़ना, वह विचारना और वह समझना अज्ञान है। विचारवृत्तिके साथ त्यागवृत्तिको उत्पन्न करना यही विचार सफल है, यह ज्ञानीके कहनेका परमार्थ है।

समयका अवकाश प्राप्त करके नियमितरूपसे दो-से चार घडी तक मुनियोंको अभी 'सूयगडांग' का विचार करना योग्य है–शांत और विरक्त चित्तसे।